P: ISSN NO.: 2321-290X RNI : UPBIL/2013/55327 VOL-6* ISSUE-9* May- 2019
E: ISSN NO.: 2349-980X **Shrinkhla Ek Shodhparak Vaicharik Patrika**

पर्यावरण संरक्षण की परंपरा और वन पंचायत की व्यवस्था– एक समीक्षा

डी. के. शाही
एसोसिएट प्रोफेसर,
भूगोल विभाग,
डी. ए. वी. पी.जी. कॉलेज,
देहरादून, उत्तराखण्ड, भारत

सारांश

परंपरागत पर्वतीय समाज का प्रकृति के साथ निकट का संबंध (परस्पर सह संबंध) रहा है। मानव और प्रकृति के इस परस्पर सह संबंध के कारण उनमें अपने संसाधनों को दीर्घजीवी बनाए रखने की चेतना विद्यमान रही है। पर्यावरण संरक्षण की यह चेतना लोक परम्परा के माध्यम से पीढ़ी दर पीढ़ी हस्तांतरित होती रही है और संस्कृतियों को चिरंजीविता प्रदान करती रही है।

सदियों से प्राकृतिक पर्यावरण पर आश्रित उत्तराखण्ड के ग्रामीण समाज के जनमानस में व्याप्त यह चेतना, समय–समय पर प्रकृति संरक्षण के विभिन्न व्यवस्थाओं के रूप में अभिव्यक्त होती रही है। इनमें एक व्यवस्था है, सामूहिक भागीदारी वाली वन पंचायत की व्यवस्था। वन पंचायत सामाजिक वानिकी एवं संयुक्त वन प्रबंधन के द्वारा रक्षित वनों पर समाज के दबाव को कम करता है तथा मानव शक्ति को वनोत्पादन की ओर प्रोत्साहित करता है।

मुख्य शब्द : वन पंचायत, सामाजिक वानिकी, संयुक्त वन प्रबंधन, संसाधन संरक्षण और संवर्धन।

प्रस्तावना

परंपरागत पर्वतीय समाज का प्रकृति के साथ निकट का संबंध (परस्पर सहसंबंध) रहा है। मानव और प्रकृति के इस परस्पर सहसंबंध के कारण उनमें अपने संसाधनों को दीर्घजीवी बनाए रखने की चेतना विद्यमान रही है। पर्यावरण संरक्षण की यह चेतना लोक परम्परा के माध्यम से पीढ़ी दर पीढ़ी हस्तांतरित होती रही है और संस्कृतियों को चिरंजीविता प्रदान करती रही है।

सदियों से प्राकृतिक पर्यावरण पर आश्रित उत्तराखण्ड के ग्रामीण समाज के जनमानस में व्याप्त यह चेतना, समय–समय पर प्रकृति संरक्षण के विभिन्न व्यवस्थाओं के रूप में अभिव्यक्त होती रही है। इनमें एक व्यवस्था है, सामूहिक भागीदारी वाली वन पंचायत की व्यवस्था।

लोक आस्था द्वारा संरक्षित और लोक परम्पराओं द्वारा पोषित, जन सहभागिता पर आधारित वन पंचायत की परंपरागत प्रणाली आज भी उत्तराखंड के पर्वतीय क्षेत्रों में प्रकृति और संस्कृति को संरक्षण प्रदान कर रही है और पर्वतीय समाज को चिरंजीविता प्रदान कर रही है। सदियों के अनुभव से अर्जित संसाधन संरक्षण और संवर्धन के पारंपरिक ज्ञान आज भी पर्यावरण संरक्षण में सक्रीय योगदान कर रहे हैं और वर्तमान को भविष्य के संवर्धन की प्रेरणा प्रदान कर रहे हैं।

परन्तु यह दुर्भाग्य की बात है कि वर्तमान समय में वन संसाधनों को चिरस्थायी बनाने के लिए जो भी प्रयास हो रहे हैं, उसमें ग्रामीणों के परम्परागत ज्ञान और संरक्षण की चेतना (लोक मान्यताओं और लोक व्यवहारों) को स्थान नहीं दिया जा रहा है।

साहित्यावलोकन

अरुण अग्रवाल, 2001, ने अपने अध्ययन में वनों के संरक्षण की संयुक्त रणनीति में समुदायों की भूमिका का मूल्यांकन प्रस्तुत किया है। वन पंचायत सामाजिक वानिकी एवं संयुक्त वन प्रबंधन के द्वारा रक्षित वनों पर समाज के दबाव को कम करता है तथा मानव शक्ति को वनोत्पादन की ओर प्रोत्साहित करता है। जे. एस. रावत और अन्य, 2012 ने अपने अध्ययन में सामुदायिक वानिकी की परंपरा का वर्णन किया है और पर्यावरण की सुरक्षा और संसाधन प्रबंधन में इसकी भूमिका का वर्णन किया है। वी. एस. रावत 2012 ने भी अपने अध्ययन में सामुदायिक वनों के महत्व को प्रस्तुत किया है। चौहान और टोडारिया, 2012 ने अपने अध्ययन में मध्य हिमालय क्षेत्र में वनपंचायतों की ऐतिहासिक भूमिका का वर्णन प्रस्तुत किया है। उन्होंने वनों की सुरक्षा और विकास में वन पंचायत की भूमिका का विस्तार से वर्णन किया है। नेगी, चौहान

और टोडारिया ने अपने अध्ययन में उत्तराखंड में वन पंचायतों के प्रभावी प्रबंधन में प्रशासनिक और नीतिगत बाधाओं का भी विस्तार से वर्णन किया है।

नागहामाकाजुयो, सत्या लक्ष्मण और अन्य, 2016 ने अपने अध्ययन में सतत विकास के संदर्भ में वन के प्रबंधन के लिए संघर्ष और वन पंचायत आंदोलन का विस्तार से वर्णन किया है। अंजलि बरोला और अन्य, 2016 ने अपने अध्ययन में स्थानीय समुदायों की वन उत्पादों पर निर्भरता का वर्णन किया है।उन्होंने वनों की सुरक्षा के संदर्भ में वन संरक्षण और प्रबंधन की पारंपरिक प्रथाओं के महत्व को प्रस्तुत किया है। अंजलि बरोला ने वनों के प्रबंधन के लिए वन पंचायतों के द्वारा तैयार किए गए नियम और कानून का भी वर्णन किया है।

अध्ययन का उद्देश्य

1. उत्तराखण्ड राज्य के सन्दर्भ में वन पंचायतों का ऐतिहासिक परिपेक्ष में अध्ययन और उनके महत्व की समीक्षा करना,
2. वन संरक्षण की दिशा में वन पंचायतों के समक्ष उपस्थित चुनौतियों की समीक्षा करना,
3. वन पंचायत की परंपरागत तप्रणाली के सन्दर्भ में आधुनिक वन पंचायतों की समीक्षा करना.
4. वर्तमान स्थिति का विश्लेषण और भविष्य की संभावना का मूल्याङ्कन करना.

समस्या चयन का आधार;

1. वन पंचायत की परंपरागत प्रणाली और आधुनिक वन पंचायतों की कार्यप्रणाली के सन्दर्भ में शोधपूर्ण ज्ञान की कमी,
2. लोकआस्था द्वारा संरक्षित और लोकपरम्पराओं द्वारा पोषित, जन सहभागिता पर आधारित पर्यावरण संरक्षण पद्धति के विशेष अध्ययन की आवश्यकता।

विधितंत्र

प्रस्तुत शोध कार्य में समुदाय आधारित संसाधन प्रबंधन (वन प्रबंधन की परंपरागत पद्धति और उसके आधुनिक स्वरुप) का तुलनात्मक अध्ययन आपेक्षित था, अतः समुदाय आधारित प्राकृतिक संसाधन प्रबंधन की पद्धतियों का संकलन (दस्तावेजीकरण) और परीक्षण, सफल प्रयोगों का एकल अध्ययन, वर्तमान मेंस स्थापित संस्थाओं के कार्यपद्धति, सर्वोत्तम क्रियाकलाप, प्रथागत अधिकार और स्थानीय ज्ञान (बेस्ट प्रैक्टिसेज) का मूल्याङ्कन किया जाना अपेक्षित था।

वर्तमान अध्ययन प्राथमिक तथा द्वितीय सूचनाओं (आंकड़ों के स्रोत) पर निर्भर है, प्राथमिक सूचनाएं औपचारिक और अनौपचारिक साक्षात्कार एवं एकल अध्ययन के माध्यम से अर्जित की गयीं, जबकि द्वितीय सूचनाओं को विभिन्न प्रकार के दस्तावेजों जैसे रिपोर्ट, समाचारपत्रों, शोध ग्रन्थों, शोध पत्रों, संन्दर्भ ग्रन्थ और अन्य सूचनाओं/पुस्तिकाओं तथा इण्टरनेट से प्राप्त किया गया।

विश्लेषण

माधव गाडगिल और रामचंद्र गुहा के अनुसार 1860 के आस–पास अंग्रेज़ पूरी दुनिया में वनों के विनाश के मुखिया बन चुके थे। तब उत्तरांचल के पर्वतीय क्षेत्र के शंकुधारी वन यहां की सबसे कीमती प्राकृतिक सम्पदा थी।इनमें कीमती इमारती लकड़ी के पेड़ चीड़, देवदार और कैल आदि के घने जंगल थे। भारत में जैसे–जैसे ब्रिटिश हुकूमत का विस्तार हुआ उनके द्वारा वनों का अधिग्रहण भी बढ़ता गया। अंग्रेज़ी सरकार ने लोगों से (पारंपरिक/सार्वजानिक स्वामित्व से) वन छीन कर अपने संरक्षण में ले लिया। तत्कालीन सरकार ने कालांतर में इन वनों के दोहन की नीति बनायी, जिसमें स्थानीय लोगों के प्रथागत अधिकारों पर अंकुश लगा दिया गया। स्थानीय लोगों के द्वारा इसके विरोध में व्यापक विद्रोह हुआ। तब से लेकर आज तक देश में वनों के प्रबंधन के कई प्रयोग किए जा चुके हैं।

वन पंचायतों का इतिहास

उत्तरांचल के पर्वतीय प्रदेश में सर्वप्रथम पं.गोविंद बल्लभ पंत ने 1930–31 में वन पंचायतों की परंपरागत व्यवस्था को आधुनिक रूप में प्रस्तुत किया। इसके उपरांत वर्ष 1932 से पर्वतीय जनपदों में वन पंचायतों के गठन का कार्य प्रारम्भ हो गया था। यद्यपि इसके बेहतर नतीजे सामने आए, लेकिन तत्कालीन सरकार के द्वारा बाद में वनों पर ग्रामीणों के अधिकारों में कटौती करदी गयी। इसके कारण वनों और ग्रामीणों के बीच दूरी बढ़ती गई और ग्रामीणों के हक–हकूक एवं वनों की सुरक्षा का प्रश्न, एक स्थायी संघर्ष का विषय बन गया।

वर्तमान समय में उत्तराखंड राज्य के 11 जनपदों में वन पंचायत अधिनियम लागू है, जिनमें वन पंचायत नियमावली 2005 एवं उत्तराखंड वन संसोधन नियमावली 2012 के अनुसार वन पंचायतों का गठन किया जा रहा है। इन पंचायती वनों का संरक्षण–संवर्धन खुद वन पंचायतें करती हैं। वन विभाग इसमें केवल मार्गदर्शन की भूमिका में रहता है। उत्तराखंड राज्य के 11 पर्वतीय जनपदों में राजस्व ग्रामों की कुल संख्या 13,729 है, इसमें से अभी तक 12,085 वन पंचायतों का गठन हो गया है। इनका क्षेत्रफल लगभग 5.00 लाख हैक्टेयर है एवं भविष्य में इनके क्षेत्रफल में और वृद्धि किया जाना है।

वन पंचायतों का महत्व

उत्तराखण्ड में वनपंचायतों का अत्यधिक महत्व है। यद्यपि वन उत्पाद की दृष्टि से उत्तराखण्ड काफी समृद्ध क्षेत्र है। तराई के क्षेत्र में साल, सागौन, सीसम के वन मिलते हैं और पर्वतीय क्षेत्र में (उपर) चीड़ बांज और देवदार के वन पाए जाते हैं। परन्तु प्रदेश के अंदर ज्यादातर वनाच्छादित भूमि संरक्षित है (रिजर्व फॉरेस्ट संरक्षित क्षेत्र होते हैं) जिनमें सामान्यतः प्रवेश निषिद्ध होता है। इसके विपरीत वन पंचायतों के अंतर्गत सामान्यतः गांव के अन्दर स्थित अनारक्षित वन होते है। इनका उपयोग ग्रामीण जनसमुदाय अपने हक–हकूक के लिए कर सकते हैं।

पशुचारण और पशुपालन की दृष्टि से वन पंचायतों का अपना महत्त्व है। राज्य में चारा उत्पादन के लिए अतिरिक्त कृषि भूमि का उपयोग करना संभव नही है। प्रत्येक राजस्व ग्राम का अपना वन हो, जिनसे ग्रामीणों को चारापत्ती प्राप्त हो, इस परिकल्पना को साकार करने के लिए सभी 13,729 ग्रामों में वनपंचायतों की गठन की गयी है। पशुचारा के अभाव के न्युनीकरण में वनपंचायतें सबसे अधिक सहायक हो सकती हैं। वन पंचायतों में

उपलब्ध भूमि पर चारागाह (सिल्वी ग्रासलैण्ड) विकसित किया जा सकता है। इसके अतिरिक्त वन पंचायतों के माध्यम से स्थानीय लोग अपने संसाधनों एव आजीविका को बढ़ा सकते हैं।

वन पंचायतों के छोटे से भूगोल में बहुत जैविक विविधता पायी जाती है। प्रकृति संरक्षण में इनकी महत्वपूर्ण भूमिका होती है। इनके माध्यम से वनों के संरक्षण–संवर्धन में भी स्थानीय लोगों की भागीदारी सुनिश्चित की जा सकती है। यदि इनका समुचित उपयोग किया जाए तो राज्य में भू–क्षरण की रोकथाम, आपदा प्रबंधन में वन पंचायतों की महत्वपूर्ण भूमिका हो सकती है। जन सहभागिता से वनाग्नि की सुनिश्चित रोकथाम भी हो सकती है।

वन पंचायत स्थानीय लोगों को आजीविका के अवसर भी उपलब्ध कराते हैं। महिला समूहों द्वारा नर्सरी स्थापित कर आजीविका के नए अवसर विकसित किये जा रहे हैं। इस तरह महिलाओं को स्वावलम्बी बनाने व महिला उत्थान में इन वन पंचायतों की महत्वपूर्ण भूमिका हो सकती है। कौशल विकास आदि गतिविधियों में स्थानीय लोगों को जोड़ कर इन वन पंचायतों को और भी प्रभावी (रोजगार परक) बनाया जा सकता है। इसके अतिरिक्त इकोटूरिज्म को प्रोत्साहन देने में भी वन पंचायत की भूमिका महत्वपूर्ण हो सकती है।

दुर्भाग्यवश, अब तक इस वन पंचायतों का उपयोग वैसा नहीं हो पाया है, जैसा होना चाहिए था। हालांकि, पूर्व में वन विभाग की ओर से वन पंचायतों के सशक्तीकरण की पहल अवश्य की गयी, परन्तु यह कुछ वन पंचायतों तक ही सीमित रही और वह भी सीमित पैमाने पर। सरकार को चाहिए कि वह सभी वनपंचायतों के लिए ऐसे कदम उठाए, जिससे सभी जगह वन पंचायतों से जुड़े लोगों की वन संरक्षण में सक्रिय भागीदारी हो सके, साथ ही लोगों को वनों से मिलने वाले हक–हकूक आसानी से मिल सकें। इसके लिए प्रदेश सरकार द्वारा प्रभावी कदम उठाए जाने की आवश्यकता है।

वन पंचायतों के समक्ष चुनौतियां;

राज्य में कुछ वन पंचायतें अपने दायित्व का बखूबी निर्वहन कर रही हैं। सरकार के द्वारा भी वनपंचायतों के सुदृढ़ीकरण पर जोर दिया जा रहा है। इनके माध्यम से न सिर्फ ग्रामीणों को जंगलों की सुरक्षा को प्रेरित किया जा रहा है, बल्कि रोजगारपरक कार्यक्रमों के जरिए उनकी आर्थिक स्थिती संवारने की कोशिशें भी चल रही हैं। इस सबके बावजूद वनपंचायतों की राह में चुनौतियां कम नहीं हैं।

कुछ क्षेत्रों में ग्रामीण वनभूमि का अधिग्रहण एवं अतिक्रमण उनके समुचित विकास के समक्ष चुनौती उपस्थित कर रहा है। सीमांत जिले पिथौरागढ़ के धारचूला और मुनस्यारी में वनमाफिया और स्थानीय दबंग लोगों के द्वारा वनपंचायतों के जंगलों में अवैध कब्जा, वन पंचायतों के विकास में बहुत बड़ी चुनौती उपस्थित करता है। कई जंगलों में स्थानीय दबंग लोगों या वन माफियाओं ने सरकारी जमीन पर अवैध कब्जा भी कर लिया है। कहीं कहीं दबंगों ने इन जंगलों की घेराबंदी भी कर दी है। कहीं कहीं स्थानीय दबंग लोगों के द्वारा जंगल के रास्ते तक बंद कर दिए जाते हैं। यदि कोई ग्रामीण वहां घास काटने जाता है, तो दबंग लोग उन्हें भगा देते हैं। ग्रामीणों को चारे के लिए भी घास नहीं काटने दी जाती है। यहां तक कि दबंग लोग गरीब और कमजोर वर्ग के लोगों को सूखी लकड़ी तक नहीं लाने देते हैं। उनके द्वारा इन वनों में उगने वाली घास को चोरी छुपे बेच लिया जाता है।

कहीं कहीं अवैध रूप से हरे–भरे पेड़ों को सूखा कर चोरी छुपे काट लिया जाता है। अच्छी घास और लकड़ियों के लालच में स्थानीय दबंग जंगलों में आग भी लगा देते हैं। कहीं कहीं हाईवे पर चलने वाले ढाबों के लिए भी अवैध रूप से जंगल से लकड़ियां काटी जाती है और उसको ईधन के रूप में इस्तेमाल किया जाता है। दिन प्रतिदिन अंधाधुंध कटान व वनों में लगाई जाने वाली आग से वन सम्पदा को काफी क्षति हुई है। अनेक स्थानों पर गांववालों ने इन सबका विरोध किया, परन्तु वन संरक्षण की दिशा में वांच्छित सफलता नहीं मिल पा रही है।

जंगलों की सुरक्षा के लिए जरूरी साजोसामान, उचित हक–हकूक का विषय भी वनपंचायतों की सफलता और असफलता में निर्णायक सिद्ध हो रहा है। यही नहीं, इन तमाम विषयों में ग्राम और वनपंचायतों के मध्य सामंजस्य भी किसी बड़ी चुनौती से कम नहीं हैं। इसके कारण लोगों में वन संरक्षण के प्रति आंशिक उदासीनता उत्पन्न होन लगी है।

लोक आस्था और वन संरक्षण

ग्रामीणों और वन विभाग के संघर्ष के बीच कुछ वन पंचायतों ने अपने वनों को संरक्षित रखने की अनोखी पहल की है। इनके द्वारा लोकआस्था को वनसंरक्षण का माध्यम बना लिया गया है। सीमांत पिथौरागढ़ में वन संरक्षण के निमित्त स्थानीय समाज में एक अनूठी प्रथा प्रचलित है, जिसमें वन क्षेत्र ऐसे लोक देवता को अर्पित किया जाता है, जिसकी लोकमानस में न्यायकारी छवि होती है और अन्याय करनेवाले का अनिष्ट कर देने की छवि होती है। कुमाऊं क्षेत्र के ज्यादातर हिस्सों में ऐसे वन जिनकी सुरक्षा और संरक्षा आवश्यक होती है, उनको लोकदेवी कोटगाड़ी, लोकदेव गंगानाथ या गोलूज्यू महाराज को अर्पित कर दिया जाता हैं। यह बंधन इतना बाध्यकारी है कि कठोरतम कानून भी उसके सामने कुछ नहीं है। वन कानून भी जिनके मन में डर पैदा नहीं कर पाता, वह भी देवनिषेध का उलंघन नहीं कर पाते हैं।

एक बार लोकदेवी या देवता को अर्पित कर दिए जाने के बाद, वन क्षेत्र में वह सभी गतिविधियां स्वतः बंद हो जाती हैं, जिनका, वन अर्पित करते समय, ग्रामीणों द्वारा आपसी सहमति के आधार पर निषेध कर दिया गया होता है। जैसे अनेक स्थानों पर ऐसे वन क्षेत्र में प्रवेश करने तक की मनाही होती है। कुछ वन क्षेत्रों में कुल्हाड़ी चलाना बंद हो जाता है, पर पालतू पशुओं की चराई खुली रहती है या गिरी–पड़ी लकड़ी उठाने की मनाही नहीं होती है, पर वन्य जीवों का शिकार करना वर्जित होता है।

आरक्षित तथा पंचायती वनों की अपेक्षा देव वन क्षेत्र के रख–रखाव में न तो किसी तरह के खर्च की कोई

P: ISSN NO.: 2321-290X RNI : UPBIL/2013/55327 VOL-6* ISSUE-9* May- 2019
E: ISSN NO.: 2349-980X **Shrinkhla Ek Shodhparak Vaicharik Patrika**

जरूरत होती है और नहीं सुरक्षा के लिए चौकीदार की जरुरत होती है, लोक आस्था और विश्वास के कारण वन सुरक्षित और संरक्षित रहते हैं। इन लोकदेवताओं की छवि अन्याय करने वाले को कड़ा दण्ड देने की होती है, इस लिए वन क्षेत्रों में लागू किए गए नियमों का उल्लंघन करने पर देवता के प्रकोप का भय ही निषेध का कार्य करता है।

गंगोली हाट तहसील के अंतर्गत चिटगल वन पंचायत में, जब लम्बे समय तक नीति–नियामकों द्वारा वन पंचायतों और स्थानीय लोगों की अनदेखी कर स्थानीय समस्याओं के समाधान हेतु कारगर उपाय नहीं किए गए, तब अंततः स्थानीय लोगों ने जंगलों की सुरक्षा स्थानीय देवी–देवताओं को सौंपना शुरू कर दिया।

देवी–देवताओं को समर्पित जंगल

पर्वतीय क्षेत्रों के जंगलों में अवैध कटान आदि से बचने के लिए जंगलों को देवी–देवताओं के नाम पर चढ़ाने की परंपरा रही है। ग्रामीणों द्वारा देवी–देवताओं को समर्पित किए गए जंगलों से अवैध कटान वर्जित रहता है।

गांव (परिचय)	वन/वनस्पति	संरक्षकदेवी/देवता
चिटगल, गंगोलीहाट (पिथौरागढ़)	बांज, बुरांश और देवदार के वृक्षों से आच्छादित जंगल	न्याय की देवी कोटगाड़ी को समर्पित
उप्राड़ा गंगोलीहाट (पिथौरागढ़)	बंज और चीड़ के वृक्षों से आच्छादित जंगल	न्याय की देवी कोटगाड़ी को समर्पित
मडलकिया, मुनस्यारी	बांज, बुरांश, देवदार और सुरई के वृक्षों से आच्छादित जंगल	न्याय की देवी कोटगाड़ी को चढ़ा दिया
डुंगरासेठी (चक्कू) गांव, चंपावत	बांज का खूबसूरत जंगल	मां भगवती और ग्राम देवता श्याम राजा बाबा को अर्पित
हाटथर्प, डीडीहाट	चौड़ी पत्ती वाले वृक्षों के वन	न्याय की देवी कोटगाड़ी को समर्पित
भुरमुनी गांव, पिथौरागढ़	बुरखड़ी में बांज के जंगल	न्याय की देवी कोटगाड़ी कोकिला को समर्पित
छाना पांडे का जंगल, पिथौरागढ़	बांज, बुरांश, और देवदार के वृक्षों से आच्छादित जंगल	देवी कोटगाड़ी (कोकिला) देवी को समर्पित
पुरान, पिथौरागढ़ (देभुड़ी से कौलखोला, नंदपानी और बल्दजुड़ी से सिग्ना खोला तक का जंगल)	बांज, बुरांस, कूकाट आदि के वृक्ष	भनारी गोरिया देवता (ईष्ट देवता) को अर्पित
खसपड़–क्वैराली अल्मोड़ा	बांज, बुरांश, उतीश, काफल आदि चौड़ी पत्ती प्रजाति के पेड़ पौधे के जंगल	न्याय के लिए प्रसिद्ध कोटगाड़ी देवी को समर्पित

वर्ष 2000 में जंगलों को देवी, देवता को चढ़ाने की परंपरा गंगोलीहाट तहसील के चिटगल से शुरू हुआ।

तमाम तरह के बदलावों के बावजूद, लोक आस्था के कारण प्रकृति से रिश्ता बनाए रखने वाले पारम्परिक रीति–रिवाजों के कारण यहां न केवल अब तक वनों का अस्तित्व कायम है, बल्कि उसमें लगातार अभिवृद्धि हो रही है। इस मॉडल की सफलता को देखते हुए अन्य वन पंचायतों ने भी अपने यहां इस मॉडल को अपनाने की मंशा जाहिर की है।

व्यष्टि अध्ययन –1 तहसील–पिथौरागढ़, उप्राड़ा का जंगल

स्थान	उप्राड़ा का जंगल, तहसील–पिथौरागढ़
वनस्पति	बांज और चीड़ के वृक्षों से आच्छादित जंगल,
समस्या	जंगल में अवैध कटान, अवैध कटान रोकने के लिए ग्रामीणों के कई बार प्रयास विफल, काटन रोक पाने में प्रशासनिक विफलता,
लोकआस्था / लोकमान्यता	जंगल को बचाने के लिए आस्था का सहारा, संरक्षण के उद्देश्य से न्याय की देवी कोटगाड़ी को स्थानीय जंगल समर्पित, लोकमान्यता; जो भी पंचायत के निर्णय का उल्लंघन करेगा, देवी उसे दंड देगी.
सामूहिक निर्णय	वन सरपंच की अध्यक्षता में आयोजित बैठक में जंगल को न्याय की देवी कोटगाड़ी को चढ़ाने का निर्णय, निर्णय के अनुसार/तहत जंगल दस वर्षों के लिए देवी को चढ़ाया गया. जंगल में किसी तरह का पातन, कटान पर पूर्ण प्रतिबन्ध
प्रभाव	दैवीय प्रकोप के भय से अब इन जंगलों में अवैध गतिविधियां पूरी तरह ठप हो चुकी हैं.
भविष्य की संभावना	कटान पर पूर्ण प्रतिबन्ध, वन संरक्षण,

व्यष्टि अध्ययन 2 तहसील–चंपावत, डुंगरासेठी (चक्कू) गांव का जंगल

स्थान	डुंगरासेठी (चक्कू) गांव का जंगल, तहसील–चंपावत
वनस्पति	बांज का वन, स्थानीय लोगों ने स्वयं के प्रयास से गांव में बांज का जंगल तैयार किया, जंगल में असंख्य पेड़ तैयार हो चुके हैं.
समस्या	(सुरक्षा की चिंता) कुछ असामाजिक तत्व चोरी छिपे जंगल को नुकसान पहुंचाने लगे, जंगल में पौधे बड़े हो जाने पर ग्रामीणों को इसकी सुरक्षा की चिंता सताने लगी.

लेकआस्था / लोकमान्यता	जंगल को बचाने के लिए आस्था का सहारा, संरक्षण के उद्देश्य से ग्रामीणों ने विधि विधान के साथ जंगल की सुरक्षा का जिम्मा मां भगवती और ग्राम देवता श्याम राजा बाबा को सौंप दिया. अगले दस वर्षों के लिए जंगल ग्राम देवता को समर्पित. लोगों का विश्वास है कि जो व्यक्ति जंगल को नुकसान पहुंचाने का प्रयास करेगा, उसे मां भगवती और श्याम राजा बाबा दंडित करेंगे.
समूहिक निर्णय	स्थानीय लोगों ने सर्वसम्मति से फैसला लिया कि जंगल की सुरक्षा के लिए देवताओं को अर्पित किया जाए. जंगल में पेड़ों और पत्तियों का कटान प्रतिबंधित कर दिया गया सामूहिक रूप से फैसला लिया गया कि जंगल को वर्ष में एक बार खोला जाएगा, उस समय लोगों को सूखी पत्तियां और लकडियां समेटने का अवसर दिया जाएगा.
प्रभाव	गांव के लोगों ने राजस्व पुलिस के सहयोग से जंगल के आस पास हो रहे अतिक्रमण को हटा दिया.
भविष्य की संभावना	ग्रामीणों ने संकल्प लिया कि जंगल को विकसित करने के लिए लगातार प्रयास जारी रहेंगे, समय–समय पर पौधा रोपण भी किया जाएगा.

व्यष्टि अध्ययन 3 तहसील–मुनस्यारी, मडलकिया गांव का जंगल,

स्थान	तल्ला जोहार स्थित मडलकिया गांव का जंगल, तहसील–मुनस्यारी,
वनस्पति	बांज, बुरांश, देवदार और सुरई के वृक्षों से आच्छादित जंगल, इसके अलावा शीतकाल में नामिक और हीरामणि ग्लेशियर क्षेत्र में भारी हिमपात होने पर कस्तूरामृग सहित उच्च हिमालयी दुर्लभ वन्य प्राणी यहां पर शरण लेते हैं.
समस्या	(सुरक्षा की चिंता) इमारती लकड़ी का जंगल होने के कारण, जंगल माफियाओं की नजरों में रहता था
लोकआस्था / लोकमान्यता	जंगल को बचाने के लिए आस्था का सहारा, संरक्षण के उद्देश्य से ग्रामीणों ने न्याय की देवी कोटगाड़ी को चढ़ा दिया है, आने वाले पांच वर्षो के लिए जंगल की रक्षा अब कोटगाड़ी देवी करेंगी.
सामूहिकनिर्णय	स्थानीय लोगों ने सर्वसम्मति से फैसला लिया कि पांच वर्ष के लिए जंगल को देवी को चढ़ा दिया जाए. सामूहिक रूप से फैसला लिया गया कि जंगल की सूखी घास और लकड़ी ग्रामीण एकत्रित कर सकते हैं, परन्तु पांच वर्षो के लिए हरे वृक्षों और हरी घास पर किसी का भी अधिकार नहीं रहेगा. सामूहिक निर्णय में इस बात का भी उल्लेख किया गया है कि अज्ञानवश यदि किसी व्यक्ति द्वारा जंगल के किसी वृक्ष पर कुल्हाड़ी चलाई गई तो देवी उसे माफ करे और जानबूझ कर कोई वृक्ष सहित वन्य प्राणियों पर हथियार चलाता है तो देवी उसे दंडित करे.
प्रभाव	हरियाली बरकरार रखने को जंगल देवी को समर्पित, जंगल के साथ वन्य जीवों का संरक्षण.
भविष्य की संभावना	वनों की हरियाली और जैव विवधता की भरपाई संभव है.

व्यष्टि अध्ययन 4 तहसील–डीडीहाट, हाटथर्प गांव का जंगल,

स्थान	हाटथर्प गांव का जंगल, तहसील–डीडीहाट,
वनस्पति	चौड़ी पत्ती वाले वृक्षों से आच्छादित जंगल
समस्या	(सुरक्षा की चिंता) अवैध कटान से सुरक्षा और वनों की हरियाली और जैव विवधता की भरपाई.
लोकआस्था / लोकमान्यता	हरियाली को बरकरार रखने के लिए जंगल कोटगाड़ी देवी को समर्पित कर दिया गया है.
समूहिक निर्णय	वन सरपंच की पहल पर चरमा नदी से सटे जंगल को अवैध कटान आदि से बचने के लिए न्याय की देवी को समर्पित कर दिया गया. सामूहिक रूप से फैसला लिया गया कि देवी को समर्पित जंगल से कोई भी ग्रामीण वन सम्पदा का दोहन नहीं कर सकेगा, देवी को चढ़ाए गए जंगल में कोई भी व्यक्ति बिना अनुमति के हथियार लेकर प्रवेश नहीं कर सकेगा.
प्रभाव	ग्रामीणों द्वारा देवी–देवताओं को समर्पित किए गए जंगलों से अवैध कटान वर्जित रहता है.

निष्कर्ष

पिथौरागढ़ जिले की गंगोलीहाट तहसील में पिछले चार–पांच वर्षों के भीतर चिटगल, फरसिल, चौटियार, मणकनाली, कोठेरा, जाखनी, धौलेत व कनालीछीना का देवथल, जागेश्वर में पुलाई आदि गांवों में अनेक पंचायती व स्थानीय वन लोकदेवताओं को अर्पित कर दिए गए हैं।

सामान्यतः ऐसे वन क्षेत्र को ही लोक देवता को अर्पित किया जाता है जो अत्यधिक दोहन के कारण विघटन की स्थिति को प्राप्त कर चुके होते हैं। जब तक वन क्षेत्र में हुए दोहन की पूरी भरपाई नहीं हो जाती

तबतक उनसे किसी भी वनउत्पाद को लेने की मनाही होती है। पुराना स्वरूप वापस लौटने के बाद वन क्षेत्र को पुनः उपयोग के लिये खोल दिया जाता है।

देवता को अर्पित कर दिए गए वन क्षेत्र में मानव हस्तक्षेप समाप्त हो जाने के कारण हरियाली और जैव विविधता की भरपाई अत्यन्त तेजी से होती है और जंगल अपने पुराने स्वरुप को प्राप्त कर लेते हैं। इससे इन क्षेत्रों में हरियाली लौट आयी है। गंगोलीहाट क्षेत्र का अनुभव इसी निष्कर्ष कीपुष्टि करता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची

Arun Agrawal, 2001, The Regulatory Community: Decentralization and the Environment in the Van Panchayats (Forest Councils) of Kumaon, India, Mountain Research and Development, Vol. 21, No. 3, http://www.jstor.org/stable/3674069

B.S. Negi, D.S. Chauhan and N.P. Todaria, 2012, Administrative and Policy Bottlenecks in Effective Management of Van Panchayats in Uttarakhand, India, LEAD Journal, 8/1,ISSN 1746-5893

Ballabh, V., Balooni, K., and Dave, S. 2002. 'Why local resources management institutions decline: A comparative analysis of Van (Forest) Panchayats and Forest Protection Committees in India'. World Development, 30: 2153-2167.

Barola, Anjali &Goyden, K & Tewari, Ashish. (2016). A Case Study on Van Panchayat of Kashiyalekh in Kumaun Himalaya, Research Gate, https://www.researchgate.net/publication/319256466

Gairola, H. and Negi, A.S. 2011. 'VPs in Uttarakhand: A perspective from practitioners. In Community based Biodiversity conservation in the Himalayas', eds. Gokhale Y; Negi AK, New Delhi: 'The Energy and Resource Institute'.

Guha, Ramchandra. 1983. 'Forestry in British and post British India: a historical analysis'. Economic and Political Weekly 18:1949-1947.

Guha, Ramchandra. 1989. 'The Unquiet Woods: Ecological Change and Peasant Resistance in the Himalaya'. New Delhi: Oxford University Press.

J S Rawat, and others, 2012, Van Panchayat and Forest Management in Uttarakhand, Sci. & Cult.VOL. 78, NOS. 3–4

Nagahama, Kazuyo, Satya, Laxman and others. 2016, The Van Panchayat Movement and Struggle for Achieving Sustainable Management of the Forest: A Case Study of Uttarakhand. SDRP Journal of Earth Sciences & Environmental Studies. JESES.https://www.researchgate.net/publication/306910978

Rawat AS. 1999. 'Forest management in Kumaon Himalaya, struggle of the marginalized people'. Indus Publishing Company, New Delhi.

Sarin, M. 2001. 'Disempowerment in the name of 'participatory' forestry? Village forests joint management in Uttarakhand'. Forests, Trees and People, Newsletter 44.

V. S. Rawatand others. 2011. 'Local level Community Forest Management an Effective Tool in Conserving Forest Biodiversity'. Russian Journal of Ecology 5: 388-394.

V. S. Rawat, 2012, Reducing Emission from Community Forest Managements: A Feasible Study from Almora, Uttarakhand, International Journal of Plant Research, 2(6) DOI: 10.5923/j.plant.20120206.02

V. Sati, 2005. 'Natural resource condition and economic development in Uttaranchal Himalaya, India', 'Journal of Mountain Science', Vol 2 No 4, pp., 336 – 350